IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

प्रेमचंद और दलित विमर्श : एक समीक्षा

किरण कुमारी , लेक्चरर , हिंदी शोधार्थी ,नेट(हिंदी,एजुकेशन),

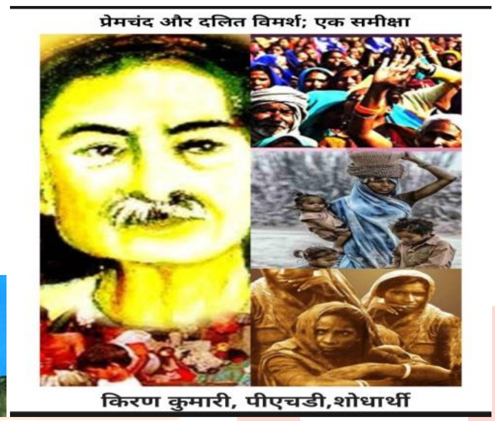

सारांश:-

साहित्य समाज का दर्पण होता है। प्रत्येक वर्ग का साहित्यकार समाज की संवेदनाओ से भावुक हो अपनी लेखनीचलने हेतु स्वतंत्र है। परन्तु कुछ दलित साहित्यकारों ने गैर साहित्यकारों के साहित्य को दलित मानने से इंकार करना हिंदी साहित्य के इतिहास में दुखदायी मोड़ है। यह लेखक ,पाठक,समाज और देश के लिए नैतिक रूप से हितकर नहीं है। आलोचकों के दो मत हैं एक वर्ग दलित की नियति पर रचित साहित्य को दलित साहित्य मानता है चाहे उसका लेखन सवर्ण ने किया हो । इसके विपरीत कुछ लेखक दलितों द्वारा दलितों के लिए लिखा साहित्य को ही दलित साहित्य की संज्ञा देते हैं । इनका मानना है कि स्वर्ण द्वारा जो यथार्थ भोगा ही नहीं गया उसकी प्रमाणिक अनुभूति को वह कैसे अभिव्यक्त कर सकता है ।

प्रेम कुमार मणि, मोहनदास नैमिशराय के अनुसार " दलितों के द्वारा दलितों के लिए लिखा जा रहा साहित्य दलित साहित्य है । उन्होंने जो नारकीय पूर्ण जीवन भोगा है वह कल्पना की वस्तु नहीं । वह उनका भोगा हुआ यथार्थ और जख्मी लोगों का दस्तावेज है।"

दलित साहित्यकार दलित कथा साहित्य की परंपरा प्रेमचंद से भी नहीं मानते । उनका कहना है यथार्थ के अंगारे को चिमटे से पकड़ने और उसको हाथ से छुने का अनुभव अलग-अलग होता है । दलित साहित्यकारों द्वारा खड़े किए गए इस विचार को अतिवादी दृष्टिकोण और साहित्यिक संकुचन माना जा सकता हैं । फिर भी हिंदी कथा साहित्य में गैर दलित लेखन में प्रेमचंद का नाम सर्वोपरि है । उनके योगदान को नकारा नहीं जा सकता ।

विभिन्न दलित आलोचक कुछ भी कह लें । परंतु इतिहास और हिंदी साहित्य गवाह है कि दलितों के जीवन से जुड़ी समस्याओं को सर्वप्रथम प्रेमचंद जी ने ही उठाया । प्रेमचंद जी ने दलित विमर्श पर दो प्रकार के कथा साहित्य लिखें । पहले जिसमें दलित प्रश्न था । दूसरा वह जो दलित जीवन से संबंधित था ।

संकेत शब्द या बीजक शब्द :दलित, विमर्श , उपेक्षित, हिंसा, अमानवीय व्यवहार ,गैर दलित साहित्य , शोषण, वर्ण व्यवस्था , जातिवाद ,ब्राह्मणवाद, सवर्ण, दलित साहित्य , साहित्यिक सकुचन , सवेदना ।

प्रस्तावना:-

आज दलित साहित्यकार परंपरागत काव्यशास्त्र ,सौंदर्य बोध तथा समकालीन अन्य विमर्श को छोड़कर नवीन कसौटी की खोज कर रहे हैं। वह अफ्रीका के अश्वेत जातियों के साहित्य से प्रेरणा प्राप्त कर रहे हैं और अपनी दलित अस्मिता को सफलतापूर्वक रेखांकित करने का प्रयास कर रहे हैं। वह अपने वर्ग की समस्याओ, त्रासदी, अवहेलना , उपेक्षा , हिंसा , असवेदनशीलता , प्रताड़ना, अमानवीय व्यवहार और अपने पर होने वाले प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष हिंसा का विरोध अपने रचना में कर रहे हैं। सदियों से उपेक्षित ,कुचलित, प्रताड़ित यह दलित साहित्यकारों अन्य को इस विमर्श की शुरुआत का श्रेय नहीं देना चाहते। परन्तु इसकी पड़ताल करने पर पता चला कि 1914 में सरस्वती में प्रकाशित हीरा डोम की कविता 'अछूत की शिकायत' प्रथम दलित रचना थी। मोहनदास नैमिषराय, सूरज पाल चौहान, ओमप्रकाश बाल्मिकी, शरण कुमार लिम्बाले ,जयप्रकाश कर्दम , श्योराज सिंहु बेचैन , रजत रानी, सुदेश तनवीर आदि दलित साहित्यकार तथा शंबुक , युद्धरत, आम आदमी आदि दलित पत्रिका प्रेमचंद के बाद आई। आधुनिक काल के अंतिम दो दशकों के दलित साहित्यकार रचना में अधिक सक्रिय हुए परन्तु ये लोग दलित साहित्य की परंपरा मध्यकाल अर्थात कबीर रैदास और इससे भी पूर्व वाल्मीकि या व्यास से ना मानकर आधुनिक चेतना जनित मानते हैं। अगर ऐसा है तो हिन्दी साहित्य के इतिहास मे प्रेमचन्द (1880-1936) नाम और उनके द्वारा रचित सूरदास, सदगति, मंत्र , ठाकुर का कुआ , पूस की रात , गोदान, कफन में वर्णित दलित विमर्श की बात गलत है। इसी की समीक्षा हम कई आलोचको और प्रेमचंद के समर्थको के कथन का अध्ययन तथा उनके रचना की समीक्षा इस शोध आलेख में करेंगे। फिलहाल हम कह सकते हैं कि प्रेमचंद जी ने जो अलख जगाए उसे मशाल बनाने का कार्य दलित साहित्यकार तथा उषा चन्द्रा, रमणिका गुप्ता, रजत रानी मीनू, मैत्रयी पुष्पा, सुभद्रा कुमारी जैसे अन्य लेखिकाओ ने भी किया।

दलित विमर्श स्वरूप और संकल्पना:-

दलित साहित्य का केंद्र बिंदु मानव है। सुप्रसिद्ध दलित साहित्यकार बागुल जी का मानना है कि "मनुष्य की मुक्ति को स्वीकार करने वाला , मनुष्य को महान बनाने वाला , वंश , वर्ग ,जाति , श्रेष्ठतम का प्रबल विरोध करने वाला दलित साहित्य ही हो सकता है।" दलित साहित्य प्रतिबद्धता की अभिव्यक्ति है। कुछ लोग इसे छायावादी और प्रगतिशील साहित्य के संदर्भ में अनुभूति और स्वानुभूति की अभिव्यक्ति मानते हैं। परंतु दलित साहित्यकार इसे आत्माभिव्यक्ति मानते हैं।

अध्ययन का उद्देश्य:-

कोई भी कार्य बिना उद्देश्य का नहीं होता अर्थात इस शोध आलेख का भी उद्देश्य है। सर्वप्रथम इसका उद्देश्य प्रेमचंद के साहित्य को दलित विमर्श का प्रस्थान बिंदु मानना है। दूसरा , प्रेमचंद के रचना में दलित विमर्श को ढूंढना। तीसरा , प्रेमचंद और दलित पुरुष तथा दलित महिला के लेखन में संक्षिप्त तुलनात्मक अध्ययन करना। चौथा, सदियो से उपेक्षित और प्रताड़ित दलित वर्ग को समाज में समान व्यक्ति की भाँति सभी अधिकारो से परिपूर्ण कराने हेतू प्रयास। पाँचवा , दलितो को जागरूक कर आत्मस्वाभिमान के लिए संघर्ष करने के लिए प्रेरित करना। छठा, दलित महिलाओं पर हो रही समस्याओं को उद्घाटित करना। सातवा, सदियों से चली आ रही वर्ण व्यवस्था में परिवर्तन का समर्थन। आठवा, दलितों को न सिर्फ शिक्षा बल्कि शोध और लेखन की तरफ प्रेरित करना। नौवा, अम्बेडकरवादी विचारधारा को समझना। दसवां, 20वीं- 21वीं सदी के दलित साहित्यकारों के दलित आंदोलन की रचनात्मक अभिव्यक्ति की समीक्षा करना।

समीक्षा का अर्थ:-

समीक्षा का मतलब विश्लेषण विवेचन, छानबीन, जांच , ,पड़ताल करना। इसे समालोचन, सूक्ष्म परीक्षण , जांच, मीमांसा या अनुसंधान भी कह सकते हैं। समीक्षा का शाब्दिक अर्थ है सम्यक परीक्षा , सम्मिति , अन्वेषण आदि। समीक्षा लेखन का मतलब है किसी विषय पर पहले से प्रकाशित शोध का समीक्षा। समीक्षा लेखन मौजूद अध्ययनों से उपलब्ध डाटा का आलोचनात्मक मूल्यांकन करने की पद्धति है। इस शोध आलेख में प्रेमचंद के कथा साहित्य में दलित विमर्श की समीक्षा करेंगे।

दलित शब्द का उद्धव और विकास:-

वर्तमान भारतीय सभ्यता का निर्माता वैदिक जन थे। उनका दर्शन ब्राह्मणवाद रहा , इसे भारतीय दर्शन भी कहते हैं। दलित वर्ग सदैव से संघर्षशील, समाज का अविभाज्य अंग रहा। हिंदू समाज में वर्ण व्यवस्था की चार श्रेणियां में ब्राह्मण, ,क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र थे परंतु एक पंचम वर्ग अति शुद्ध और अछूत अथवा अस्पृश्य कहलाए।

दलित शब्द की उत्पत्ति:-

दलित शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के धातु दल से हुई जिसका अर्थ है तोड़ना , दलना, कुचलना । अंग्रेजी शब्दकोश में दलित शब्द के लिए डिप्रेस्ड शब्द और इसके अतिरिक्त डाउनट्रोड्डेन शब्द भी मिलता है । दलित शब्द का अर्थ है दबाया , कुचला गया, उत्पीड़ित । संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर संपादक रामचंद्र वर्मा की पुस्तक में दलित का कोशिका अर्थ है मसाला हुआ , दबाया ,रौंदा या कुचला हुआ , खंडित ,विनिष्ट किया हुआ ।

विमर्श का अर्थ होता है बहस ,वार्तालाप , चर्चा ।

दलित विमर्श की शुरुआत:-

दलित विमर्श का मुद्दा अस्सी के दशक में उभरा जो नब्बे तक आते-आते काफी चर्चित हो चुका था ।

अंबेडकर युग से पहले हीरा डोम की अछूत की शिकायत रचना से हुई । 1955 मे मोहनदास नैमिशराय की रचना'अपने-अपने राय ' भी दलित विमर्श की प्रमुख रचना थी । कहे जाते हैं । परंतु1880 के दशक में ज्योतिबा फुले ने मराठी शब्द दलित का प्रयोग किया । दलित विमर्श के जनक अंबेडकर जी ने 1930 में डिप्रेस्ड क्लासेस फेडरेश की स्थापना की तथा 1934 में इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की स्थापना कर दलितों को संगठित करने का प्रयास किया । 1956 में 5 लाख दलित ने अम्बेडकर जी के साथ नवयान बौद्ध धर्म को अपना लिया ।

दलित आलोचकों का मत:-

हिंदी में ओमप्रकाश वाल्मीकि , मोहनदास नैमिशराय, डॉ ए एन सिंह ,कमल भारती , डॉक्टर धर्मवीर प्रभृति तथाअन्य दलित साहित्यकारों ने प्रतिपादित किया कि " दलितों के द्वारा दलितों के जीवन पर लिखा गया साहित्य ही दलित साहित्य है ।" किसी गैर दलित या सवर्ण द्वारा लिखे गए दलित साहित्य नहीं है। उनकी दृष्टि वह में सहानुभूति या दया का साहित्य है चेतना का नहीं,चाहे प्रेमचंद का हो या निराला का ।

दलित साहित्य के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए डॉक्टर जयप्रकाश कर्दम कहते हैं "दलितों द्वारा लिखा गया ऐसा साहित्य दलित साहित्य है जो उन्हें उनका दमन और शोषण करने वालों के विरुद्ध संघर्ष के लिए प्रेरित करें । उनके अंदर सम्मान और स्वाभिमान से जीने की भावना पैदा करें । भाग्य , भगवान , पुनर्जन्म , परलोक आदि में विश्वास की बजाय वैज्ञानिक सोच का विकास करें । वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था सहित उन तमाम शोषण मूलक व्यवस्थाओं का विरोध करने की सीख दे जो असमानता, अन्याय और अमानवीयता की जनक या पोशक है । "

मराठी लेखक डॉक्टर खांडेकर लिखते हैं "दलित साहित्य केवल प्रतिकार या प्रतिशोध नहीं है यह केवल जानकारी या निषेध नहीं है बल्कि जो कुछ मंगल और शुभ है उन सब की निर्मिती के लिए यह पूर्व परंपराओं से विद्रोह है । यह विद्रोह हिंदू धर्म पर आधारित परंपराओं रूढ़ियों और विचारों से है जिसने उन्हें दलित, शुद्र, अस्पृश्य नाम दिया उनके विरुद्ध है । यह कहना उचित होगा कि विद्रोह ही दलित साहित्य का मूल धर्म और उसकी विशेषता है । "

प्रेमचंद दलित विमर्श को लेकर हिंदी लेखन में काफी विवाद है कुछ लोग उन्हें घृणा का प्रचारक , ब्राह्मण विरोधी , प्रचार वादी , विदेशी साहित्य का नकलचीखाने कहने से भी परहेज नहीं किया । प्रेमचंद के मृत्यु के साठ सत्तर साल बाद उनके बहुचर्चित उपन्यास रंगभूमि को सार्वजनिक रूप से जलाया गया और उन्हें दलित विरोधी कहा गया । बालकृष्ण शर्मा नवीन जो प्रेमचंद के प्रशंसक थे । उन्होंने कहा:- "प्रेमचंद के निंदक मर जाएंगे ; प्रेमचंद जीवित रहेंगे ।"

प्रेमचंद के कथा साहित्य में दलित विमर्श:-

कोई भी साहित्यकार युगीन परिस्थितियों से निश्चित रूप से प्रभावित होता है लेकिन उसका व्यक्तिगत जीवन भी उसके साहित्य पर असर डालती है ।प्रेमचंद का जीवन काफी संघर्षमय परिस्थितियों में गुजरा । इन्हीं परिस्थितियों ने उन्हे जीवन के हालात को समझने के लिए तैयार किया। प्रेमचंद जी ने भी अपने जीवन में पारिवारिक , सामाजिक , आर्थिक, राजनीतिक , सम्पादिकीय तथा अन्य प्रकार की कठिनाइयों से संघर्ष कर साहित्य के प्रति रूचि बरकरार रखा । प्रेमचंद जी ने अपनी कहानियों और उपन्यासों में सदियों से भारतीय समाज में संचालित मनुवादी व्यवस्था ने ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , शूद्र के नाम पर समाज को बांटकर विषमता की जो गहरी खाई खोदी है उसका विरोध किया है। मनुवादी वर्णव्यवस्था ने जहां एक और ऐसा वर्ग तैयार किया जिसके हाथ में सभी अधिकार हैं वहीं दूसरी तरफ ऐसा वर्ग जिसे जीने तक का अधिकार नहीं था पशु से बत्तर जीवन जीने

को विवश थे। इन्होंने दलित , अछूत के साथ विषमता पूर्ण और अमानवीय व्यवस्था को धर्म सम्मत और शास्त्र सम्मत नहीं बताया है ।

इनकी कहानी सद्गति, कफन , ठाकुर का कुआं आदि में दलित जीवन को तथा उसकी त्रासदी को बहुत ही गहराई से अभिव्यक्त किया गया । साथ ही उनके साथ अन्याय करने वाले ब्राह्मणवादी विचारधारा के लोगों को भी आड़े हाथों लिया गया है । 1931 में रचित सद्गति दुखी चमार की कथा है । इसमें वह अपनी बेटी का विवाह करने हेतू लगन निकलवाने पंडित के पास जाता है और उसकी चिरौरी विनती करता है । पंडित लग्न निकालने के लिए उसे मोटी सी गांठ काटने के लिए दे देता है । इसके बदले ना उसे कोई बेगारी देता है ना ही दो रोटी । वह अंततः काम करते-करते भूखा प्यासा मर जाता है । छुआछुत को मानने वाला पंडित कानून की तथा दलित वर्ग से डरकर दुखी चमार के लाश कंधे पर टांग कर ठिकाना लगता है ।

ठाकुर का कुआं में जोखू की पत्नी अपने पति को स्वच्छ पानी पिलाने की मंशा से ठाकुर के कुएं से पानी लाने जाती है । वहां ठाकुर के लोग तथा सवर्ण उसे पानी नहीं निकालने देते हैं।इस कहानी में प्रेमचंद जी ने भूख प्यास जैसे जन्मजात प्रवृत्ति पर भी ब्राह्मण और उच्च वर्ग के संवर्णों ने अपना अधिकार कर रखा था उसे उद्घाटित किया है। इस कहानी में अछूतों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति का मार्मिक वर्णन हुआ है ।

कफन में प्रेमचंद जी ने ऐसे रूढ़िवादी दलितों का चित्रण किया है जो अपने प्रति होने वाली हिंसा उत्पीड़न से अनभिज्ञ है । वह आलसी, काम से कतराने वाला, चोर और अमानवीय प्रवृत्त का है । कहानी का पात्र घीसू और माधव है । कहानी में वह अपनी पत्नी के प्रसव पीड़ा में छटपटाने के बावजूद उसके प्रति उदासीन रुक रखता है और शांति से आराम करते हुए आलू खाता है । इतना ही नहीं उसके मरने पर उसके कफन के पैसे की भी खर्च अपने खाने में कर देता है । इस कहानी के जरिए प्रेमचंद ने दलित समाज में ऐसे व्यक्ति को दिखाने का प्रयास किया है जिसने दलित होना स्वीकार कर लिया है । मेरे विचार में कफन में प्रेमचंद ने घीसू और माधव की मानसिकता के लिए स्वयं घीसू और माधव को नहीं बल्कि सामंती समाज के शोषण और पाखंड को जिम्मेदार बनवाना है प्रेमचंद का उद्देश्य भी यही है कि जो व्यवस्था घीसू और माधव की मानसिकता पैदा कर सकती है उसका नाश मनुष्यता के विकास के लिए आवश्यक है । (प्रोफेसर मैनेजर पांडेय से साक्षात्कार , .राष्ट्रीय सहारा (हस्तक्षेप) 25 जनवरी , 1997 ,पृष्ठ -३, दलित चेतना पर विशेष रूप से केंद्रित)

मंदिर कहानी में प्रेमचंद जी ने सुखिया और उसका पुत्र जियावन को कथा के केंद्र में रखकर सवर्ण समाज की शोषण , उत्पीड़न , अमानवीयता को चित्रित किया है। सुखिया अपने बीमार बेटे को ठीक करने के लिए मंदिर में प्रार्थना करना चाहती है तो बाह्मणी द्वारा अनुमति नहीं दी जाती। पुत्त प्रेम से ग्रसित सुखिया सारे सामाजिक भय को तोड़ कर मंदिर का ताला रात में तोड़ पूजा और प्रार्थना करती है । इस बात की खबर मिलते ही सवर्ण लोग उसे धक्का देकर मंदिर से निकालते है जिससे उसका पुत्त गिर कर मर जाता है ।

दूध का दाम 1934 में लिखी कहानी में प्रेमचंद ने नायिका भंगी जो उच्च वर्गीय महेश नाथ जी के घर में जच्चे खाने में काम करती है । वहाँ महेश नाथ जी के यहां तीन बेटियों के बाद पैदा हुए बेटा को अपने नवजात शिशु के हिस्से का दूध पिलाती है। इसके कारण उसके अपने नवजात पुत्र की का स्वास्थ्य गिर जाता है । उसे अपनी मां का दूध नहीं प्राप्त होता । भंगी के पति पहले ही मर चुके हैं और पर नाला साफ करते हुए सांप काटने से भूंगी की भी मृत्यु हो जाती है तब उसका पुत्र मंगल अनाथ हो जाता है और महेश बाबू के घर के जूठन पर पलने लगता है । यहां पर प्रेमचंद जी ने कहानी में नीचता और पाखंड दिखाकर बताया है कि अछूत का दूध पवित्र लेकिन उसका देह अपवित्र है। प्रोफेसर मैनेजर पांडे कहते हैं कि " प्रेमचंद की कहानी में राजनीति और सामाजिक चेतना अत्यंत प्रभावशाली ढंग से व्यक्त हुई है ।"

कर्मभूमि उपन्यास में तो प्रेमचंद ने दलितों के मंदिर प्रवेश की बात,दलित कर्मियो को संगठित होकर संघर्ष करने का चित्रण किया है ।
प्रेमाश्रम में अछूतों से बेगार लिए जाने और किसानों द्वारा भी उनसे अच्छा व्यवहार न किए जाने का चित्रण हुआ है ।

कायाकल्प में प्रेमचंद जी ने पहली बार चमारों के लिए मजदूर शब्द का इस्तेमाल किया है। कायाकल्प में भी दलितों द्वारा बेकार करवाए जाने की प्रथा के प्रतिरोध के स्वर हैं।

रंगभूमि में प्रेमचंद जी ने एक अछूत जाति के सूरदास में गांधी जी की छवि उतार कर और धर्म , न्याय , सत्य की लड़ाई में उसे वीर बना दिया। वह अंधा भिखारी है पर उसकी अंतर दृष्टि प्रबल है।उसके आगे सवर्ण राजा, महाराजा, शासक, उद्योगपति सभी झुकते हैं और उसकी श्रेष्ठता स्वीकार करते हैं। अंत में उसका बलिदान गांधी जी के बलिदान से कम नहीं है दलित जाति के नायक को गांधी का प्रतीक बनाकर उसे समाज के शिखर पर प्रतिस्थापित किया है।
गोदान में मातादिन और सीरिया के प्रसंग में दलित विमर्श देखने को मिलता हैं। ब्राह्मण मातादिन के मुंह में हड्डी डालने का प्रसंग एक बार फिर प्रेमचंद की दलित दर्शन के क्रांतिकारी रूप को उद्घाटित करता है।

प्रेमचंद की **घासवाली, मंत्र , गरीब की हाय, विध्वंस** आदि भी कहानी है जिसमें दलित , वंचित , शोषित , पीड़ित , उपेक्षित वर्ग की कथा तथा उसकी समस्या और संघर्ष चित्रित है। हिंदी कहानी की यथार्थवादी यात्रा प्रेमचंद के आगमन से आरंभ होती है। प्रेमचंद जी ने कहानी को आम जनता के द्वार पर लाकर खड़ा कर दिया तथा जीवन के विभिन्न पहलुओं तथा समाज के सभी वर्ग को अपनी कथा को उद्घाटित करता है।

गैर दलित साहित्यकारों की रचना और विषय वस्तु :-

प्रेमचंद जी अपने समय से आगे की सोच रखने वाले साहित्यकार थे उन्होंने जिस दलित चेतना के चित्रण की नींव रखी उसे आगे ले जाने का काम निराला ,यशपाल ,नागार्जुन , रांगेय राघव तथा अन्य ने किया। निराला जी के उपन्यास चतुरी चमार , बिल्लेसुर- बकरीहा , कुल्ली भाट तथा कविता वह तोड़ती पत्थर दलित चेतना के इतिहास का मिल का पत्थर साबित हुआ है। यशपाल की कहानी पर्दा , दिव्या; राहुल संस्कृतयानंद की पुजारी , प्रभा और सुमेर और अमृतलाल नागर की नाच्यो बहुत गोपाल दलित जीवन की अभिव्यक्ति के रूप में दृष्टिगोचर होता है|

समकालीन हिंदी साहित्य में दलित संदर्भों की दृष्टि से शैलेश मटियानी का नाम उल्लेखनीय है। अहिंसा, जुलूस , हारा हुआ ,संगीत भरी संध्या ,मां तुम आओ , अलाप ,भवरे की जात , आंधी से आंधी तक , परिवर्तन , आक्रोश , भय , आवरण , दो दुखों का एक सुख , चुनाव , प्रेम मुक्ति , चिट्ठी के चार अक्षर , वृत्ति , सतजुगिया , गोपुली , गफूरन , गृहस्थी ,इबूमंगल , प्यास , शरण्य की ओर आदि कहानी दलित जीवन संदर्भों से संबंधित है। इन कहानियों में दलित वर्ग से संबंधित चरित्र मुख्यतः तीन रूपों में चित्रित हुए हैं। पहले वह जो भारतीय समाज की और मानवीयता से लाचार होकर समझौता करता दिखाई देता है। दूसरा वह जो समाज के प्रति आक्रोश तो व्यक्त करता है परंतु उसका आक्रोश इतना दबा होता है कि अंत तक टूट कर समाज की व्यवस्था को झेलता है। तीसरा वह जो अपनी मान मर्यादा और हितों के लिए समाज और व्यवस्था से सीधे टकराता है।

गोपाल उपाध्याय का एक टुकड़ा इतिहास ,गिरिराज किशोर का परिशिष्ट ,मधुकर सिंह का उत्तर गाथा , मुद्राराक्षस का दंड विधान , नीलकंठ का बंधवा रामदास , मन्नू भंडारी का महाभोज , मनमोहन पाठक का गगन घंटा गहरानी , पुन्नी सिंह का पत्थर घाटी का शोर आदि उपन्यासों में दलित जीवन पर जो प्रकाश डाला गया है वह अनुभूति पूर्ण यथार्थ लिखने वाले दलित लेखकों के साहित्य के बराबरी करता है। इन उपन्यासों में सदियों से सताए, अपेक्षित , शोषण करते लोगों का जीवन अंकित करते समय सामाजिक जीवन की जड़ता , पूर्णता और मान्यता को भी रेखांकित किया गया है।

रतन कुमार संभरिया दलितों द्वारा लिखे स्वानुभूतिपरक साहित्य को दलित साहित्य मानने पर आपत्ति करते हैं। उनकी दृष्टि में आपकी अनुभूतियां समय-समय पर बदलती रहती हैं दलित साहित्यकारों द्वारा खड़े किए गए इस विचार को संभरिया अतिवादी दृष्टिकोण और साहित्यिक संकुचन मानते हैं। दलित लेखकों का कथन है कि स्वयं दलित ही दलित साहित्य लिख सकता है क्योंकि उनके द्वारा लिखे साहित्य में अनुभव की प्रमाणिकता के साथ-साथ संघर्ष और सामाजिक और मानसिक स्थितियों का यथार्थ चित्रण करते हैं वैसा गैर दलित नहीं लिख पाता। (हरपाल सिंहआरुष , 'दलित साहित्य के आधार तत्व ')

दलित साहित्यकारों की रचना और दलित विमर्श:-

दलित साहित्य वर्ण जाति व्यवस्था से मुक्ति , वैज्ञानिक सोच और संवेदनशीलता का साहित्यिक हस्तक्षेप है जो अंधविश्वासों , अन्याय एवं शोषण के विरुद्ध होकर मनुष्य को पूर्वाग्रह से मुक्त करता है । वस्तुतः यह प्रतिरोध का साहित्य है । दलित वर्ग सदियों से सवर्णों के द्वारा उत्पीड़न , दम्भ एवं शोषण का शिकार होता रहा है और इसे हीदलित साहित्यकारों नेअपनेरचनाओं में विभिन्न ढंग से प्रस्तुत किया है ।

दलित उपन्यासों में जयप्रकाश कर्दम का छप्पर , सत्य प्रकाश का जस्ट तस भई सवेरे , मोहनदास नेमीशराय का मुक्ति पर्व , इंद्र बसावड़ा का घर की राह , ओमप्रकाश वाल्मीकि का जूठन प्रमुख है । दलित कहानी में दयानंद भदोही का सुरंग , सुशीला टाकमोरे का 'टूटना ' ,सूरजपाल चौहान का हैरी कब आएगा , ओमप्रकाश वाल्मीकि का पुनर्वास , कुसुम वियोगी का चार इंच की कलम बहुत चर्चित कहानी है ।

दलित लेखकों का नाटक में अछूतानन्द का रामराज्य न्याय (१९२६), रमेस्वरी प्रसाद राम का अछूतउद्धार(१९२६),माता प्रसाद का अछूत का बेटा,धर्म के नाम पर धोखा , शुशीला टाकभौरे का नंगा सत्य, रंग और व्यंग आदि प्रमुख है।

उपन्यासों में पहला दलित उपन्यास रामजीलाल द्वारा रचित बंधनमुक्ति (१९५४) है जो अप्राप्य है | दूसरा, डी पी वरुण द्वारा रचित अमरज्योति (१९८०) ह। इसके आलावा जगदीश चंद्र का यादो का पहाड़(१९६६), धरती धन न अपना (१९९२), नरक कुंड में वास (१९९४), मोहनदास नैमिशराय की मुक्ति पर्व ,महानायक बाबा साहेब अम्बेडकर (२०१३) , रूपनारायण सोनकर का सूअरदान (२०१०) और सुशीला टाकभौरे का नीला आकाश , तुम्हे बदलना होगा आदि प्रमुख दलित उपन्यास है।

दलित कहानियो में प्रमुख - ओम प्रकाश बाल्मीकि द्वारा रचित सलाम (२०००), घुसपैठिये (२०१३), श्योराज सिंह बेचैन की चमार की चाय (२०१७),जय प्रकाश कर्दम की तलाश ,शुशीला टाकभौरे की संघर्ष , एस के पंजय की थप्पड़,शरण कुमार लिम्बाले की दलित ब्राम्हण ,छुआछूत दलित आलोचना में धर्मवीर भारती की कबीर बाज़ भी कपोत भी ,प्रेमचंद :सामंत का मुंशी ,प्रेमचंद की नीली आँखे, कवल भारती का डॉ अम्बेडकर :एक पुनर्मूल्यांकन , ओम प्रकाश बाल्मीकि का दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र प्रमुख है।

दलित आत्मकथा में भगवन दास की में भंगी हूँ , ओमप्रकाश की जूठन , सूरजपाल जी की तिरस्कृत , संतृप्त। शिकंजे का दर्द, मुर्दहिया, मणिकर्णिका , दोहरा अभिशाप , झोपड़ी से राजभवन तक , मेरी पत्नी और भेड़िया , घुटन प्रमुख है।

दलित साहित्यकारों के कथन:-

मराठी साहित्यकार बाबूराम बागुल का मनाना है कि " शब्द में अनेक प्रकार का बोध होता है जैसे अपमान बोध, दुःख बोध, दैन्य दासत्व बोध ,विश्व बंधुत्व बोध, जाति वर्ण बोध, क्राति बोध (सारिका, मई ,1976, संपादक कमलेश्वर)

ओमप्रकाश वाल्मीकि का विचार है कि दलित साहित्य जन साहित्य है सिर्फ इतना ही नहीं लिटरेचर का एक्शन भी है । जो मानवीय मूल्यों की भूमिका पर सामंती मानसिकता के विरुद्ध आक्रोश जनित संघर्ष है । इसी संघर्ष और विद्रोह से उपजाऊ है दलित साहित्य। (ओमप्रकाश वाल्मीकि- दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र)

शरण कुमार लिंबाले कहते हैं "दलितों का दुख , परेशानी , गुलामी , अधःपतन और उपहास के साथ ही दरिद्रता का कलात्मक शैली से चित्रण करने वाला साहित्य ही दलित साहित्य है।दलित साहित्य मनुष्य को केंद्र मांगता है। मनुष्य के सुख दुख से समरस होता है । मनुष्य को महान मानता है मनुष्य को सम्यक क्रांति की ओर ले जाता है ।"

मोहनदास नैमिषराय कहा है कि दलित साहित्य वेदना का पीड़ा का साहित्य है| कुछ ने कहा यह मुक्ति का साहित्य है इस संबंध में अगर हम ऐतिहासिक घटनाओं , दुर्घटनाओं का अध्ययन करें तो ऐसा मानना चाहिए कि दलित साहित्य पीड़ा , वेदना अथवा

मुक्ति का साहित्य ही नहीं; बल्कि वह अपने अधिकारों , अस्मिताओं और पहचान के लिए संघर्ष करने वालों का साहित्य है ।"

हूबनाथ ने लिखा है कि दलित साहित्य की परंपरागत परिभाषा के पैमाने के आधार पर साहित्य नहीं है बल्कि सदियों से अन्याय और असमानता के नर्क में पलते बेकसूर , बेजुबानों के अंदर का हाहाकार है जो सदियों तक परे परे तेजाब बन चुका है और आक्रोश बनाकर उफन रहा है । इस साहित्य से हम गंभीरता , शालीनता , सभ्यता और सौंदर्य प्रियता की उम्मीद नहीं कर सकते हैं । (हूबनाथ , नवनीत , हिंदी डाइजेस्ट , अप्रैल 2010)

दलित साहित्य में आठवीं नवी दशक में कविता , कहानी , उपन्यास ,आत्मकथा आदि के माध्यम से दलित चेतना की स्वर प्रखर होती गई । एक और क्रांति का स्वर इसमें बुलंद हुआ तो दूसरी ओर दलित लेखन सहजता की ओर भी बढा । हिंदी में पहली दलित आत्मकथा ' मै भंगी हूं 'भगवान दास ने लिखी । इसके पश्चात जूठन ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा , कौशल्या बसंती द्वारा दोहराव अभिशाप , सूरजपाल चौहान द्वारा तिरस्कृत,मोहनदास नैमिसराय द्वारा अपने-अपने पिंजरे आदि आत्मकथाएं लिखी गई ।

इसके अतिरिक्त बिहार के रामाशंकर आर्य की घुटन पहले बिहारी दलित लेखक की आत्मकथा थी । जिसमें एक और जहां स्वर्ण के द्वारा एक दलित के प्रताड़ित होने की कथा है । वहीं दूसरी ओर दलित और पिछड़ों द्वारा प्रताड़ित होने की कथा है । जो आत्मकथाकार के लिए मानसिक परेशानी का सबसे बड़ा सबब बनता है ।

हिंदी कथा साहित्य में दलित चेतना की दृष्टि से वरिष्ठ का कथाकार विजय का प्रकाशित कथा संग्रह 'जझद' महत्वपूर्ण है । 'कद' शीर्षक कहानी में वह कहते हैं "छोटी-छोटी लड़ाइयां किश्तियों में लड़ी जा रही हैं मगर उनसे कोई फतह हासिल होने की उम्मीद नहीं है इसलिए गुनहगार आज भी उतने ही आजाद और ताकतवर हैं जितने पहले थे ।

वापसी , टिनोंपाल बेबी , लाक्षागृह आदि कहानी में कथाकार दलित और आदिवासी महिलाओं के जीवन की संगतियों पर विमर्श करता हुआ आगे बढ़ता है । अभिमन्यु की हत्या कहानी में प्रतिभाशाली छात्र रमाकांत के शोषण की कथा है ।

दलित महिला साहित्यकार की प्रमुख रचनाएंः-

दलित साहित्य में पुरुष लेखक के साथ-साथ महिला लेखिकाएं भी अपना पूरा योगदान दे रही हैं । इसमें प्रमुख हैं-सुशीला टाकभोरे का शिकंज का दर्द , रजनी तिलक का काव्य संग्रह पद चाप , कौशल्या बैसन्त्री का दोहरा अभिशापी , शांताबाई कामले द्वारा रचित माझ्या जलमाची चित्तरकथा तथा अनीता भारती की कहानी संग्रह एक थी कोटे वाली ।

सुशीला टाकभोले ने शिकंजे का दर्द आत्मकथा में उन्होंने एक स्त्री होने में अपने पारिवारिक सामाजिक संघर्ष को शब्द बद्ध की हैं । इसमें उन्होंने बताया है कि दलित महिला का जीवन ब्राह्मणवादी , पितृसत्तात्मक व्यवस्था, जाति , जेंडर , वर्ग चारो के संघर्ष के शिकंजे में कैसे फंसा रहता है । वह उसे मुक्ति के लिए कितना तड़पते हुए संघर्ष करती है । बाल विवाह से बचते हुए पढ़ाई के लिए धरने पर बैठने से लेकर जिस समुदाय में से आई थी उसके रीति रिवाज का हिंदू धर्म से अलग होने का , शादी के बाद घरेलू हिंसा को जबरदस्त रूप से किताब में व्यक्त करती हैं ।

रजनी तिलक के दो काव्य संग्रह .- पदछाप (2000) में वह राजनीति , ब्राह्मणवादी , पितृ सत्ता के खिलाफ , जाति व्यवस्था के खिलाफ , अपने शब्द बयॉ करती हैं । समावेशी नारीवाद की पक्षधर रही रजनी तमाम राजनीतिक नरसंहारों का जिक्र अपनी कविता में करती हैं । 2002 के गुजरात दंगों के खिलाफ भी लिखती हैं और बच्चों को हिंसात्मक बनाने का विरोध करती नजर आती है ।

अनीता भारती वर्तमान में दलित लेखक संघ की अध्यक्ष ,कवियत्री ,लेखिका , आलोचक , कहानीकार भी है। एक थी कोट वाली कहानी संग्रह में अनीता भारतीय आरक्षण को लेकर जो मानसिकता है अच्छे खासे शैक्षणिक संस्थानों में पर पनप रही है उनकी यथा स्थिति को पाठक के समक्ष रखती हैं । कहानी में गीता नाम की दलित शिक्षिका का स्कूल के स सवर्ण औरतें से कोटा यानी आरक्षण को लेकर संघर्ष दिखाया गया है । वह दलित स्त्री के प्रश्न को अपने ढंग से उठाती हैं ।कार्य स्थल पर व्याप्त जातिगत विसंगतियों को बेनकाब करती हैं ।

कौशल्या बसंती ने हिंदी दलित साहित्य में पहली आत्मकथा दोहरी अभिशापी को लिखी । जीवन के संघर्ष युवावस्था से ही ,जाति विरोधी आंदोलन में सक्रिय , जातीय हिंसा के साथ-साथ दलित महिलाओं पर , ब्राह्मणवादी , पितृसत्ता के जुल्मों के बारे में

,सामाजिक प्रथा जैसे बाल विवाह , बहु विवाह , अनमोल विवाह के बारे में भी लिखती है । उनके जातीय समुदाय में विधवा विवाह की प्रथा थी लेकिन उनके अलग नियम थे वह उन नियम के खिलाफ थी। जैसे विधवा की शादी रात के वक्त होती और रात में ही पति घर भेजिए दी जाती है ताकि लोग उसे ना देख ले , कोईअपशगुन ना हो जाए । एक दलित महिला अपने आसपास के रोजमर्रा जीवन को किस तरह से देखती है मूल्यांकन करती है उसे समझने के लिए पढ़ी जानी चाहिए ।
शांताबाई कांबले की पहली दलित महिलाआत्मकथा 1983 में प्रकाशित हुई। इसमें श्रम के सेक्सुअल डिवीजन के बारे में लिखती हैं । बचपन में खाने के अभाव में भूख की तड़प से लेकर एक दलित महिला के जाति वर्ग और जेंडर के संघर्ष को मुख्य पात्र नाजा के जरिए प्रस्तूत करती हैं । rयह कृति फ्रेंच भाषा में भी अनुवादित हुई है ।

अंबेडकरवादी दर्शन:-

दलित मसीहा अंबेडकर जी ने किसी नेता का भेष धारण नहीं किया । उनका पाखंड में विश्वास नहीं था लेकिन जन नेता के रूप में भारतीय राजनीति के शीर्ष पर रहकर दलितों को सामाजिक और राजनीतिक संघर्ष का एहसास कराया । दलित विमर्श पूर्ण रूप से अंबेडकरवादी विचारधारा पर टिका है ।
अंबेडकर जी ने दलितके लिए पद दलित शब्द का प्रयोग किया था । यह शब्द 1950 के लगभग प्रयोग या अंकुरित हो गया था । 1948 के आसपास दलित सेवक साहित्य संघ और साहित्य दलित साहित्य संघ की स्थापना हो चुकी थी । इनके कहने पर 5 6 लाख दलितों नेहिंदू धर्म को छोड़कर बौद्ध धर्म को अपनाया था ।
अंबेडकर जी का कहना था हिंदुस्तान देश केवल विषमता का स्थान है। समाज उसकी एक मीनार है और जाति उसकी एक मंजिल है ले किन ध्यान रखने की बात यह है कि इस मीनार में सीढी नहीं लगी है । एक मंजिल से दूसरी मंजिल तक जाने के लिए उसमें मार्ग नहीं रखा गया है । जिस मंजिल में जन्मे उसी मंजिल में मरे । नीचे की मंजिल में जन्मा व्यक्ति चाहे कितना ही लायक क्यों ना हो उसे ऊपर वाले मजिल मे प्रवेश नहीं । ऊपर की मंदिर में जन्मा व्यक्ति चाहे कितना ही नालायक क्यों ना हो उसे उसी मंजिल से ढकेलने का साहस किसी में भी नहीं । सचेतन और अचेतन पदार्थ सारे ईश्वर के रूप हैं ऐसा कहने वाले स्वधर्मियों को ही अपवित्र मानते हैं । (मुकनायक पाक्षिक में अंबेडकर जी के लेख)

निष्कर्ष:

प्रेमचंद जी का पूरा जीवन उनके चिंतन और संघर्ष की गाथा है । उनका चिंतन मानववाद, विवेकशील जनतांत्रिक भावना और दलित विमर्श के साथ-साथ अन्य कई विमर्शो (किसान विमर्श ,स्त्री विमर्श ,दलित, आदिवासी विमर्श ,वृद्ध विमर्श , अल्पसंखयक विमर्श ,पुरुष विमर्श , बाल विमर्श ,दिव्यांग विमर्श , किन्नेर विमर्श और अन्य) से जुड़ा है जो 21वीं शताब्दी में प्रचलित हुआ। उनकी हर कहानी और उपन्यास समाज में व्याप्त किसी न किसी रूढ़ीगत परंपरा का खंडन किया है। प्रेमचंद ने दलित की समस्या उनकी आर्थिक दशा और सामंतों द्वारा दलितों के शोषण उत्पीड़न को अपनी कहानी में बहुत ही मार्मिकता से दर्शाया है । प्रेमचंद जी नेअपनी कथा साहित्य में हीनता की भावना को तोड़कर दलित अस्मिता को स्थापित करने का प्रयास किया है। उसे आत्मनिर्भर और आत्मा स्वाभिमानी होने की भी संदेश दी है। प्रेमचंद जी के मृत्यु के 60-70 वर्ष बाद उनके रचना को दलित साहित्यकारों द्वारा जलाना बहुत ही अपमानजनक घटना है । दलित साहित्यकारों द्वारा उठाया गया मुद्दा बेबुनियाद और बेतुकी है क्योंकि साहित्य संवेदना की अभिव्यक्ति है। साहित्य की बहुत चर्चित पत्रिका हंस जिससे कभी प्रेमचंद जुड़े हुए थे। उसने ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा जूठन धारावाहिक रूप में प्रकाशित की । जो आलोचकों और पाठकों में बहुत चर्चित हुई । इसमें ओमप्रकाश जी ने जीवन के कटु अनुभवों को व्यक्त किया । कहने तात्पर्य यह है कि साहित्यकार को सिर्फ साहित्यकार नहीं रहना चाहिए । उसे किसी वर्ग , जाति और धर्म से जुड़े बिना समाज की संवेदनाओं को अपने लेखनी में वाणी देनी चाहिए ।

दलित का लिखा साहित्य संवेदनशील , बुद्धि परक, यथार्थपरक और स्वयं भोगी हुई अनुभूति का साहित्य है । वही दूसरी ओर दलितेतर लेखकों द्वारा लिखा गया साहित्य दलितों के लिए दया और सहानुभूति है । यह धारणा विवाद को जन्म देकर दलित साहित्य वास्तविक उद्देश्य से भटकती है बल्कि ऐसा नहीं होना चाहिए । दोनों की राह एक ही है वह है सामाजिक ,आर्थिक , राजनीतिक , राजनीतिक और संवैधानिक समानता ।

यह प्रयास सिर्फ दलितों के द्वारा ही नहीं बल्कि उनसे पहले कई महान बुद्धिजीवियों , नेताओं , लेखकों द्वारा भी किया गया । जैसे राजा राममोहन राय , दयानंद सरस्वती , प्रेमचंद , निराला नागार्जुन , राघेय राघव , नामवर सिंह तथा यशपाल आदि। राजेंद्र यादव जी कहते हैं कि “घोड़े पर लिखने के लिए घोड़ा बनने की जरूरत नहीं है ।“ साहित्य संवेदना है उसे सहानुभूति और स्वअनुभूति के दंड से परे हटकर दलित पीड़ा के दस्तावेज के रूप में समझना चाहिए । (राजेंद्र यादव जवाब दो विक्रमादित्य)|

साहित्य की बहुत चर्चित पत्रिका हंस जिससे कभी प्रेमचंद जुड़े हुए थे उसने ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा जूठन धारावाहिक रूप में प्रकाशित की। जो आलोचकों और पाठकों में बहुत चर्चित हुई। इसमें ओमप्रकाश जी ने जीवन के कटु अनुभवों को व्यक्त किया। कहने तात्पर्य यह है कि साहित्यकार को सिर्फ साहित्यकार नहीं रहना चाहिए। उसे किसी वर्ग, जाति और धर्म से जुड़े बिना समाज की संवेदनाओं को अपने लेखनी में वाणी देनी चाहिए।

जातिगत कट्टरतावाद खतरनाक है चाहे वह ब्राह्मणवाद हो या दलितवाद। दलित साहित्यकारों का उद्देश्य जाति व्यवस्था को विच्छेद कर समता मूलक समाज की स्थापना करना होना चाहिए। लेकिन जहां वह अपनी जाति को मजबूत बनाकर प्रतिशोध के स्तर पर खड़े होते हैं वहां समता की स्थापना अकल्पनीय है। उदय प्रकाश के उपन्यास पीली छतरी वाली लड़की में इसी तथ्य को विषय बनाकर लिखा गया है। कहानी का नायक जो दलित है वह अपनी ब्राह्मण प्रेमिका अंजली जोशी से प्रेम करता है। परंतु जातिगत दायरे में जाकर स्थिति ऐसी हो जाती है कि वह उसके साथ बलात्कार कर बैठता है परंतु उसकी प्रेमिका किसी भी स्थिति में अपना प्रेम नहीं छोड़ती। यहां जाति के स्तर पर प्रेमी हावी हो जाता है परंतु जातिगत समस्या का हल जाति को उकसाने में नहीं आपसी प्रेम में है।

हमें यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए की प्रकृति ने किसी के साथ भेदभाव नहीं किया है तो समाज में इतना छुआछूत भेदभाव क्यों? आजादी के बाद भी और अभी भी समाज में बहुत कुछ नहीं बदला है। परंतु साहित्य ,पत्र- पत्रिकाओं और लेख में लोगों का आक्रोश, उनकी मांगों विचारों को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने 1955 में छुआछूत के विरुद्ध, 1989 में अत्याचार के विरुद्ध और 2015 में कड़ा दलित एक्ट बनाया है। हमारी कोशिश होनी चाहिए कि हम जरूरतमंदों को इसके बारे में बताए तथा सबको समाज मे समानता दिलाए। मुझे लगता है कि भारतीय राष्ट्रीयता की पहली शर्त वर्ण व्यवस्था और जाति प्रथा का अंत तथा आर्थिक स्थिति में सुधार होना चाहिए। प्रेमचंद जी ने भी पावन तिथि लेख (1932) में लिखा था -असल समस्या आर्थिक समस्या है यदि हम हरिजन भाइयों को उठाना चाहते हैं तो साधन पैदा करना होगा, नौकरियां और रोजगार पैदा करना होगा। (प्रेमचंद विविध प्रसंग, भाग 2 ,पृष्ठ- 486, पावन तिथि लेख)।

संदर्भ सूची:-

1. भारत में किस हाल में जी रहा है - दलित, लेख, आनंद तेलतूबड़े ,बीबीसी वेबसाइट
2. दलित साहित्य की भूमिका, कंवल भारती, पृष्ठ ६७
3. दलित साहित्यका सौंदर्य शास्त्र, ओमप्रकाश वाल्मीकि, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ ५९
4. मानसरोवर, प्रेमचंद खंड- ८ प्रकाशन इलाहाबाद ,१९८६
5. प्रेमचंद के साहित्य में दलित विमर्श, लेख - प्रोफेसर चमन लाल ,जन्मत पत्रिका
6. प्रेमचंद के साहित्य में दलित विमर्श, लेख - साहित्य कुंज -ई –पत्रिका
7. प्रेमचंद की प्रासंगिकता ,हंस प्रकाशन, १९८५, इलाहाबाद
8. प्रेमचंद, मानसरोवर - १, पृष्ठ १२५
9. शैलेश मटियानी की संपूर्ण कहानी -३, प्रकल्प प्रकाशन ,इलाहाबाद, पृष्ट १६८
10. कर्मभूमि ,प्रेमचंद भाग -२, पृष्ठ -१९
11. दलित साहित्य उद्देश्य और वैचारिक, बाबुराव बागुल, पृष्ठ संख्या ७६
12. दलित साहित्य में जयप्रकाश कर्दम ,पृष्ठ - संख्या -३९
13. भारतीय चिंतन परंपरा, महात्मा फुले, पृष्ठ संख्या – ३७
14. दलित साहित्य (विशेष अध्ययन)

प्रेषिता:
किरण कुमारी

एम . ए.(हिंदी) नेट ,
एम ए (एजुकेशन).नेट,
मास्टर डिप्लोमा इन कंप्यूटर एप्लीकेशन,
पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा इन हायर एजुकेशन,